P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-7* (Part-1) March- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

उत्तर मध्यकालीन निर्गुण सन्त पलटूदास के दर्शन में निर्गुण–सगुण का निरूपण

भानु प्रताप गुप्ता
शोधार्थी,
इतिहास विभाग,
आगरा कॉलेज, आगरा,
उत्तर प्रदेश, भारत

वाई0एन0 त्रिपाठी
विभागाध्यक्ष,
इतिहास विभाग,
आगरा कॉलेज, आगरा,
उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश

ब्रह्म के दो रूप माने जाते हैं, एक निर्गुण दूसरा सगुण। वास्तव में निराकार निर्विकार गुण रहित ब्रह्म निर्गुण कहलाता है। इसके विपरीत साकार गुण सम्पन्न ब्रह्म सगुण कहलाता है। निर्गुण सगुण शब्दों का यही रहस्य और अर्थ है। साधारणतः लोगों का कथन और विश्वास है कि सगुण साकार ब्रह्म की उपासना की जाती है और निर्गुण निराकार ब्रह्म का केवल चिन्तन और अनुभव। बहुत अंश तक कथन युक्ति संगत भी हैं। जिसका कोई रूप नहीं, आकार नहीं उसकी उपासना, वन्दना कैसी, किस रूप में। उसका तो केवल चिन्तन ही सम्भव है। भक्ति के क्षेत्र में ब्रह्म का सगुण रूप ही मान्य है। कारण यह है कि निर्गुण ब्रह्म में सगुण की अपेक्षा चित्त की एकाग्रता, मन की स्थिरता सम्भव नहीं होती। सगुण परम्परा प्राचीन काल से चलती आ रही है। निर्गुण परम्परा मध्यकाल में एक धार्मिक तथा सामाजिक चिन्तन के रूप में उपजी। दोनों में भेद को लेकर अलग–अलग मान्यताएं तथा वैचारिक वैविध्य यद्यपि रहा है। लेकिन मध्यकालीन निर्गुण तथा सगुण सन्तों ने इस भेद को कोई महत्व न देकर मनुष्य के आचरण, आस्था, भाव, वाणी तथा कर्म को ही प्रमुख माना। सन्त पलटूदास ने भी निर्गुण–सगुण के विभेद को सरलता से सुलझाते हुए इन दोनों के विभेद को कोई स्थान नहीं दिया।

मुख्य शब्द : निर्गुण, सगुण, ब्रह्म, साकार, इन्द्री, निराकार।

प्रस्तावना

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में गीता में अर्जुन के प्रश्न करने पर कृष्ण ने निर्गुण और सगुण दोनों प्रकार की उपासना को समान मानते हुए दोनों में एकत्व एवं अभिन्नत्व दर्शाया है। अर्जुन के प्रश्न करने पर सगुण उपासना का पोषक करते हुये कृष्ण स्पष्ट घोषणा करते हैं कि मेरे और मन को एकाग्र करके निरन्तर मेरे भजन ध्यान में लगे हुये जो भक्तजन अतिशय श्रेष्ठ श्रद्धा से युक्त हुये मुक्त सगुण रूप परमेश्वर को मानते हैं वे मुझे योगियों में भी अति उत्तम योगी मान्य हैं। अर्थात् उनकी मैं अतिश्रेष्ठ मानता हूँ।[1] पुनः कृष्ण भगवान निर्गुण रूप की उपासना की भी प्रतिष्ठा करते हुये कहते हैं और जो पुरुष इन्द्रियों के समुदाय को अच्छी प्रकार वंश में करके मन बुद्धि से परे सर्वव्यापी अकथनीय स्वरूप और सदा एकरस रहने वाले नित्यअचल निराकार अविनाशी सच्चिदानन्द ब्रह्म को निरन्तर एकी भाव से ध्यान करते हुये उपासना में तत्पर रहते हैं वे सम्पूर्ण मूतों के हित में रत हुये और सब में समान भाव वाले योगी मुझे ही प्राप्त होते हैं।[2] इस प्रकार हम गीता में भी निर्गुण और सगुण की एक रूपता का दर्शन पाते हैं।

शोध पत्र का उद्देश्य

1. निर्गुण–सगुण भक्ति परम्परा की ऐतिहासिकता का अध्ययन करना।
2. सगुण परम्परा मुख्य लक्षण तथा सन्तों के विचारों का अध्ययन करना।
3. निर्गुण सगुण विभेद के अर्थ, व्यापकता तथा समन्वय का अध्ययन करना।
4. सन्त पलटूदास के दर्शन में सगुण–निर्गुण परम्परा का अध्ययन करना।

साहित्यावलोकन

1. पलटू साहिब की बानी (2014), बेलवीडियर प्रेस, इलाहाबाद, तीन खण्डों में सन्त पलटूदास की शब्दावली, कुंडली तथा वाणियों का मूल संग्रह प्रकाशित किया गया। सन्त पलटू के कृतित्व पर मौलिक स्रोत के रूप में इसका महत्व है।
2. बलदेव वंशी (2012) संत मलूक ग्रन्थावली, परमेश्वरी प्रकाशन, दिल्ली। सन्त पलटूदास के जीवन परिचय को प्रमुखता से प्रकाशित करते हुए उनके साहित्य को मलूक दोहावली, ज्ञान बोध, भक्ति विवेक, ज्ञान परोछि, सुख सागर, ध्रुव चरित्र के

3. रूप में प्रकाशित किया गया है। लेखक ने मौलिक साहित्य का चयन करके एक प्रामाणिक ग्रन्थ लिखा है। राम अधार गुप्त (1998), सन्त पलटू साहब, वैश्य सभा शोध संस्थान, देवरिया। इस पुस्तक में संक्षेप में सन्त पलटू के जीवन तथा उनकी शिक्षाओं को गहनता से प्रस्तुत किया गया है। सन्त पलटू के दर्शन के विभिन्न पक्षों को प्रस्तुत करने में सार्थकता दिखाई देती है।
4. बल्देव वंशी (2014) संत पलटूदास, एन0बी0टी0, दिल्ली। सन्त पलटूदास पर बनी बल्देव वंशी का यह प्रामाणिक लेखन है। सन्त के जीवन परिचय के साथ–साथ उनकी शिक्षाओं तथा रचित, छन्द्वों के सन्दर्भों को प्रस्तुत किया गया है। संत के दर्शन से जुड़े परब्रह्म, आत्मा, परमात्मा, सत्संग, माया, ज्ञान पर उनकी वाणियों के साथ टीकाएं भी दी गई हैं।
5. परशुराम चतुर्वेदी (1992) उत्तरी भारत की सन्त परम्परा, लोक भारती, इलाहाबाद। लेखक ने मध्यमकालीन निर्गुण सन्तों तथा उनके सम्प्रदायों पर विस्तृत लेखन किया है। सन्त साहित्य की गहनता से प्रस्तुति प्रशंसनीय है। सन्त पलटूदास के जीवन तथा उनके सम्प्रदाय के विषय में मौलिक सूचना मिलती है। वास्तव में निर्गुण सगुण में कोई भेद नहीं है। भेद केवल इतना है कि सगुण उपासना बाहर को वस्तु है और निर्गुण उपासना अन्दर का। निर्गुणोपासक उसी को अलग निरंजन बताते हैं और सगुणोपासक बने उसी का साक्षात् दर्शन करता है, उससे मिलन और बातें करता है। दोनों ही निर्गुण और सगुण एक दूसरे के पूरक हैं। दोनों तत्व अलग–अलग अपूर्ण और एक ही मिलकर पूर्ण हो जाते हैं।

विषय विस्तार

महात्मा तुलसी दास ने भी निर्गुण सगुण में भी एकता बतायी है। इनका कहना है कि सगुण अगुन में कोई भेद नहीं है। जो निर्गुण रूप अलख और अजन्मा है वही भक्तों के प्रेम वश हो सगुण हो जाता है।[3] इसी प्रकार उन्होंने स्पष्ट घोषणा की है कि राम अगुन अलोप और अमान है परन्तु प्रेम वश उन्हें सगुण रूप होना पड़ा।[4] प्रकृति वर्णन प्रस्तुत करते हुये एक स्थान पर तुलसी दास ने निर्गुण सगुण को वैसे ही परम्पर सम्बन्धित बताया है जैसे सर (तालाब) कमलों से मुक्त शोभा पा रहा हो।[5] निर्गुण सगुण का विवेचन करते हुए तुलसी दास जी कहते हैं कि भगवान आप सगुण भी हैं और निर्गुण भी। आप सुन्दर गुणों के मन्दिर हैं। अर्थात् श्री रामादि अवतारों में भक्त वात्सल्यादि गुण प्रत्यक्ष प्रगट होने से सगुण और सर्वव्यापी होकर भी सबसे विलग रहने के कारण निर्गुण तथा दया दाक्षिरायी अमन्त कल्याण गुणों के होने से गुण मन्दिर हैं। भ्रम रूपी अन्धकार के लिए आप प्रबल तेजस्वी सूर्य हैं, काम, क्रोध मद रूपी मतवाले हाथियों के लिए सिंह हैं। वही आप भक्तों के (मेरे) चित्त रूपी वन में निवास करें।[6] तुलसी दास राम के निर्गुण और सगुण दोनों रूपों में मानते हुए उन्हें नमस्कार करते हैं। तुलसी दास कहते हैं कि हे निर्गुण और सगुण रूप वाले विषय (मछकच्छादि) और सम रूप वाले एवं ज्ञानवाशी और इन्द्रियों की पहुंच से परे रूप रहित, निर्मल, सम्पूर्ण, अनिन्य, अपार तथा पृथ्वी के मार को नष्ट करने वाले श्रीराम चन्द्र जी को में नमस्कार करता हूँ।[7] वास्तव में भक्त तुलसी निर्गुण सगुण में कोई भेद नहीं मानते। दोनों में उनके आस्था और विश्वास है। इसी कारण निर्गुण सगुण दोनों रूपों की वन्दना तुलसी ने अनेक स्थानों पर की है।[8]

इसी क्रम में नानक ने भी निर्गुण–सगुण भक्ति के विभेद न देखकर आचरण पर महत्व दिया। कबीर ने यद्यपि मूर्ति पूजा का विरोध किया लेकिन ब्रह्म के स्वरूप का वाचन अवश्य किया। निर्गुण होते हुए भी उन्होंने सगुण परम्परा के मूल तत्वों को आत्मसात किया।

मध्यकालीन निर्गुण संत कवियों में पलटू दास ने बहुत स्पष्ट रूप से निर्गुण सगुण का निरूपण किया है और दोनों में एकत्व एवं अभिन्नत्व दर्शाया है। निर्गुण सगुण के निरूपण में उन्होंने कहा है कि जो निर्गुण है वही सगुण भी और जो सगुण है वही निर्गुण भी है। इस प्रकार से आपके मतानुसार दोनों में कोई भेद नहीं है। फिर व्यर्थ में ही लोग इस निर्गुण सगुण के प्रपंच में पड़े रहते हैं। पलटूदास अपने सद्गुरू को घर लाना चाहते हैं और उन्हें स्वागत में सरगुन की दाल और निरगुन का भात देने का निश्चय करते हैं। इस प्रकार से पलटू दास ने निर्गुण–सगुण में सम्बन्ध दर्शाने की चेष्टा की है।[9] पलटूदास सगुण को अपना नैहर तथा निर्गुण को ससुराल मान कर दोनों में परस्पर सम्बन्ध स्पष्ट करते हैं।[10] निर्गुण सगुण दोनों को पलटू दास एकरस मानते हैं और उनका ऐसा विश्वास है कि दोनों के बिना उनका पार लगना कठिन है। पलटू दास को अब निर्गुण सगुण के एकरूपता में विश्वास हो गया है अतः उन्होंने इस बाद विवाद को त्याग दिया है।[11] पलटूदास निर्गुण सगुण के भेद को मनका फेर बताते है। पलटूदास निर्गुण सगुण की विशेषताओं तथा लक्षणों को बताते हुए निर्गुण को गुण रहित और सगुण को गुण रहित बताते हैं। पलटू दास के अनुसार दोनों में केवल इतना ही अन्तर हैं। इसके अतिरिक्त निर्गुण सगुण के विषय में अन्य मत मिथ्या है तथा ऐसे व्यक्ति जो निर्गुण सगुण को दो मानते हैं, पलटू दास के अनुसार दोषी है।[12] निर्गुण की विशेषताएं बताते हुए पलटूदास उसे अजर अमर तीनों तापों से रहित, जरामरन, आवागमन से मुक्त बताते हैं तथा सगुण को जरामरन वाला और चौरासी लाख योनियों में वास करने वाला कहते हें। इस प्रकार से पलटूदास के सगुन काया ब्रह्म निरगुन दोनों हैं।[13] पलटू दास निर्गुण को निरंतर रसकार काल से परे अनादि मानते हैं और सगुण को सभी घटों, काम, क्रोध, मद, लोभ, व्रत, नेत्र, पूजा आदि में प्रगट दिखलाई पड़ने वाला बताते हैं।[14] पलटूदास ने निर्गुण सगुण को एक लक्षण पर पहुंचने के लिए दो अलग–अलग पक्ष माना है।[15] इस प्रकार पलटूदास ने निर्गुण सगुण को एक मानते हुए दोनों में सूक्ष्म अन्तर स्पष्ट किया है।

सन्त पलटूदास के पूर्ववर्ती सन्तों में कबीर और सहजोबाई के विचार विशेष उल्लेखनीय है। अन्य सन्तों में अधिकांश इस विषय पर मूक ही हैं। एकाध ने इस ओर संकेत मात्र कर विषय को अस्पष्ट छोड़ दिया है। महात्मा तुलसी दास

के विचार इस सम्बन्ध में विशेष उल्लेखनीय है। अतः उनके विचारों का भी समावेश किया गया है। वैसे तो अधिकांश सन्त निर्गुण और सगुण में सम्बन्ध दर्शाते हुए हैं पर पलटूदास इस विषय में अधिक स्पष्ट लगते हैं। आपने निर्गुण सगुण को अटूट सम्बन्ध की ओर संकेत करते हुये तुलसी की भांति निर्गुण को गुण रहित तथा सगुण को गुण सहित बताया तथा निर्गुण सगुण की एक लक्ष्य पर पहुंचने के लिए दो अलग–अलग पथ बताकर दोनों में सूक्ष्म अन्तर स्पष्ट किया है। इस प्रकार निर्गुण सगुण विवेचन में आप समुखोपासक भक्त तुलसी के अधिक निकट लगते हैं।

निष्कर्ष

सन्त पलटूदास ने निर्गुण सगुण भक्ति परम्परा के विभेद को स्पष्ट रूप में परिभाषित किया। उन्होंने जहाँ निर्गुण ब्रह्म की विशेषताओं को महत्व दिया, वहीं सगुण रूप में श्रीराम की उपासना करके इस विभेद को समाप्त किया। सन्त पलटूदास ने धर्म तथा आस्था के क्षेत्र में व्यावहारिकता को अधिक महत्व दिया। इन्होंने निर्गुण को गुण रहित तथा सगुण को गुण सहित बताया। तत्कालीन धार्मिक तथा सामाजिक परिस्थितियों में सन्त पलटूदास का मत टकराव के स्थान पर समन्वय भाव का द्योतक है जो सभी को मान्य रहा है।

अंत टिप्पणी

1. *श्रीमद्भगवतगीता, गीता प्रेस, गोरखपुर पृ0 214 अध्याय 12/2*
2. *वही, अध्याय 12/3, 4*
3. *श्रीराम चरित मानस गुटका, गीता प्रेस, गोरखपुर पृ0 101*
4. *वही, पृ0 349*
5. *वही, किश्किन्ध्याकांड पृ0 456*
6. *सगुन अगुन मन मंदिर सुन्दर भ्रमतम प्रबल प्रताप दिवाकर।*
   काम क्रोध मद गज पंचानन बसहु निरंतर जन मन कानन।। श्रीराम चरित मानस गुटका बालकांड, पृ0 63
7. *निर्गुन सगुण विषम समरूपं, ज्ञान गिरा गो तीतमरूपं*
   अमलमखिलै मनवधमपाएं, नौमि राम भंजन महि मारं।।
   श्रीराम चरित मानस गुटका अरसूर्यकांड, पृ0 136
8. *अ. जयराम रूप अनूप निर्गुन सगुन गुन प्रेरक सही।*
   दससीस बाहु प्रचंड खंडन चंड सर मडन यही।। श्रीराम चरित मानस गुटका, पृ0 432
9. *जो निरगुन सोइ सगुन सगुन सोई निरगुन हो।।*
   ललना भेद नहीं अलगात मरै कोउ गुन गुन हो।
   पलटूदास की शब्दावली पृ0 211/612
10. *साजन सन्त दुबारे जो आये पूरब प्रगटे भाग रे।*
    गज मोती चौंक किहो मैं परिछन सत सुकूत उठि जाग रे।।
    सरगुण दरि के दाल बनायउं निर्गुण झिनवा के मात रे।।
    पांव पखारि के भोजन कराये बैठे के पुरइन पात रे।।
    वही, पृ0 299/840
11. *बैठ तमोलिन बिटिया, कतरे बंगला पान।।*
    कहवां है तोरि नेंहर, कहवां है ससुरार।।
    सरगुण है मारे नेंहर, निरगुण ससुरार।।
    ज्ञान कै मोर कतरनी, गुरू शब्द अहार।। वही, पृ0 28/101
12. *निर्गुन सगुन एक दोउ मन के सब फोरनं।*
    नर्क सर्ग है होत दकाकी सब हो में परमेश्वर। वही, पृ0 309/843
13. *निरगुन में गुन नाही सगुन गुन मागें हो।।*
    ललना घांट बाढ़ जहे कहैं दोष तेहि लाग हो।। वही, पृ0 220/612
14. *अजर अमर अखंड निर्गुन रहित तोनिउ ताप है।।*
    जरामरन न होत कबंहा आवावगमन बंबाक है।
    जरामरन हे सगुन फिरि फिरि चारासी लख बास है।।
    सगुन काया ब्रह्म निरगुन दोउ पलटूदास है। वही, पृ0 220/612
15. *पथिक चले दुराराह नगर तक पहुंचे हो।।*
    ललना तैसे निर्गुन सगुन विश्वास सउचै हो।। वही, पृ0 219/612

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *परशुराम चतुर्वेदी, उत्तरी भारत की सन्त परम्परा, 1972, लीडर प्रेस, इलाहाबाद।*
2. *बल्देव वंशी, सन्त पलटूदास, 2014, दिल्ली*
3. *राम आधार गुप्त, सन्त पलटूदास, 2009, देवरिया।*